लघु कदन्न फसलों के मूल्यवर्धित उत्पाद :

पारंपरिक व्यंजनों, बेकरी उत्पादों, पास्ता उत्पादों, फ्लेक्ड और पॉप्ड उत्पादों जैसे छोटे बाजरा आधारित मूल्यवर्धित उत्पादों को तत्काल खाद्य मिश्रण विकसित और मानकीकृत किया गया है। जिन उत्पादों को आमतौर पर अनाज का उपयोग करके किसानों द्वारा तैयार किया जाता है, उनका उपयोग बढ़ाने के लिए लघु कदन्न के साथ प्रतिस्थापित किया गया है। लघु कदन्न के मूल्यवर्धित उत्पादों में इडली, डोसा, इडियप्पम, रत्ती, पिट्टू, उपमा, अडाई, दलिया, खाकरा, पनियारम, चप्पपी, हलवा, पसीना कलुकुट्टै, अधिरसम, केसरी, पौष्टिक गेंद, खीर, वडई, पकोड़ा, रिबन पकोड़ा, ओमापोडी, मुरुक्कू, थादु वडई, हॉट कोल्लुकट्टई और वडगाम प्रमुख उत्पाद हैं।

लघु कदन्न कम पानी तथा वर्षा आधारित फसलें हैं जो की बुंदेलखण्ड क्षेत्र के लिए उपयुक्त हैं। राज्य सरकार तथा भारत सरकार इन फसलों की तरफ ध्यान देकर मूल्यवर्धित उत्पादों का बाजार में उचित मूल्य पर उपलब्ध कराने के लिए प्रयासरत् है जिससे की बुंदेलखण्ड के किसान लघु कदन्न फसलों की उपयोगिता को समझते हुये उत्पादन करें। माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने 2023 को अंतर्राष्ट्रीय कदन्न वर्ष घोषित किया हैं जिससे कि बुन्देलखण्ड क्षेत्र के किसान उत्साहित होकर अपने क्षेत्र में लघु कदन्न फसलों एवं मूल्यवर्धित उत्पादों का और अधिक क्षेत्रफल में उत्पादन करके अपनी आय दोगुना कर सकते है।

व्यवसायिक फसलों की तुलना में लघु कदन्नों से होने वाले लाभ :

कदन्नों की खेती किसानों को अन्य व्यवसायिक फसलों की तुलना में अधिक आर्थिक स्थिरता प्रदान करती है। किसानों में एक अवधारणा यह भी बनी हुई है कि व्यवसायिक फसलें ज्यादा मुनाफा प्रदान करती है परंतु सूखे की स्थिति में यह फसलें पूर्णतया नष्ट हो जाती हैं, फलस्वरूप वो किसान आत्महत्या कर रहे हैं जो परंपरागत फसलें नहीं उगा रहे हैं जैसे कदन्न फसलें। इसका दूसरा अच्छा उदाहरण यह है कि बी.टी. कपास की उपज 5–6 क्विं. प्रति एकड़ होती है,एवं किसान की प्रति एकड़ सकल आय रू0 10000 से रू0 12000 होती है और सभी लागतों को हटाने के बाद किसानों को शुद्ध मुनाफा रू0 5000 प्रति एकड़ होता है। जबकि कदन्न फसलों की बात की जाए तो इसकी उपज 5 से 6 क्विंटल.प्रति एकड़ होती है व सकल आय रू0 16000 से रू0 18000 प्रति एकड़ होती है एवं सभी लागतों को हटाने के बाद किसानों को शुद्ध मुनाफा रू0 13000 से रू0 15000 प्राप्त होता है जो कि कपास की तुलना में ढाई से तीन गुना ज्यादा है। कदन्न फसलों को उगाने का मुख्य फायदा यह है कि कम शस्य क्रियाएं होने के कारण इनके उत्पादन की लागत में कमी आती है व किसानों को ज्यादा मुनाफा देती है। कदन्न फसलें व्यवसायिक फसलों की तुलना में बदलती जलवायु के प्रति ज्यादा सहनशील होती है। इन दिनों लोगों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता बढ़ रही है व लघु कदन्नों की मांग भी लगातार बढ़ रही है परंतु उत्पादन उतना नहीं हो पा रहा है। जो कि लोगों की मांग को पूरा कर सकें, इसलिए हमें किसानों को लघु कदन्नों की फसल उगाने के लिए प्रोत्साहित करना होगा ताकि उन्हें अधिक मुनाफा मिल सके और देश का किसान आत्महत्या करने को विवश ना हो। हमारे पूर्वजों ने शायद लघु अन्न फसलों को वर्षाश्रित क्षेत्रों की खेती के लिये इस कारण चयन किया होगा क्योंकि ये विभिन्न प्रकार की भूमियों एवं जलवायु पर बखूबी उगायी जा सकती है। खाद्य सुरक्षा एवं पोषण के साथ साथ ये फसलें पशुपालन के पारम्परिक रिश्ते को भी मजबूत करती है। इन फसलों से प्राप्त चारा स्वादिष्ट एवं गुणवत्ता युक्त होता है जिससे कि इनसे पशुधन को भी बढ़ावा मिलता है। ये फसलें पारिस्थितिकीय तन्त्र की सुरक्षा करती है तथा मृदा एवं जल संरक्षण के लिये अत्यन्त उपयोगी है।

रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय ने कदन्न फसलों पर 'सीड हब' की शुरूआत की है जिसके अंतर्गत कदन्न फसलों के बीज उत्पादन की प्रक्रिया शुरू हो गई है तथा दतिया फार्म पर कदन्न फसलों के बीज प्रसंस्करण इकाई का निर्माण किया गया है जिससे कि किसानों को कदन्न फसलों के उच्च गुणवत्तायुक्त बीजों की उपलब्धता समय–समय पर करायी जा सकें।

शैक्षणिक भवन

प्रशासनिक भवन

विशेष जानकारी हेतु सम्पर्क करें

डॉ. एस. एस. सिंह
निदेशक प्रसार शिक्षा
प्रसार शिक्षा निदेशालय
दूरभाष:- +91-789746699
ई–मेल : directorextension.rlbcau@gmail.com

प्रकाशित :
कुलपति
रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय
झाँसी -284003, उत्तर प्रदेश, भारत

Printed at : Classic Enterprises, Jhansi. 7007122381, 9415113108

तकनीकी प्रसार साहित्य
प्र.शि.नि./त.प्र.सा.-फोल्डर/2021/02

बुंदेलखण्ड क्षेत्र में लघु कदन्न फसलों की उत्पादन तकनीक

लेखक
डॉ. अमित तोमर
एवं
डॉ. विष्णु कुमार

प्रसार शिक्षा निदेशालय
रानी लक्ष्मी बाई केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय
झाँसी-284 003, उत्तर प्रदेश (भारत)
Website: www.rlbcau.ac.in

परिचय:

विश्व भर में लघु अन्न फसलों का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। विश्व खाद्य संस्थान के एक अनुमान के अनुसार जैव विविधता में अब तक लगभग 75 प्रतिशत ह्रास हो चुका है। केवल कुछ ही फसलों के उत्पादन में वृद्धि तथा उन पर निर्भरता मानव सभ्यता के लिये संकट की स्थिति उत्पन्न कर सकती है। वर्तमान में हो रहे जलवायु परिवर्तन एवं समस्याग्रस्त भूमि के क्षेत्रफल में वृद्धि, लघु अन्न फसलों के चुनाव एवं संरक्षण के महत्व को दर्शाती है जो कि प्रतिकूल परिस्थितियों में भी मानव के जीवनयापन के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकती है। खाद्य सुरक्षा, पोषण सुरक्षा एवं विभिन्न त्यौहारों एवं संस्कृति से जुड़े होने के कारण ये फसलें (अन्य फसलों की तुलना में) बहुत उपयोगी एवं हमारी अमूल्य धरोहर हैं, जिनको आने वाली पीढ़ियों के लिये संरक्षित रखना हमारा कर्तव्य है। हमारा देश विविधताओं का देश है तथा यहाँ पर विविध प्रकार की फसलें उगायी जाती हैं जोकि क्षेत्रीय आवश्यकताओं को देखते हुए वहाँ की खाद्य तथा पोषण सुरक्षा को पूरा करती है। भारत में असिंचित अवस्था में बोई जाने वाली फसलों में लघु अन्न का मुख्य स्थान है। लघु अन्न एक फसल समूह है जिसमें मंडुवा (रागी), मादिरा (झंगोरा), कौनी, चीना आदि बारीक दाने वाली फसलें सम्मिलित हैं। लघु कदन्न अनाजों का एक ऐसा समूह है जो कि कम जल वाली भूमि, अर्थात् शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्रों तथा सीमित उर्वरा क्षमता वाली भूमि में भी अच्छी पैदावार देती हैं। कदन्न शब्द की उत्पत्ति संस्कृत भाषा के शब्द 'खाद्यान्न' से हुई है, जिसका मतलब 'गरीब का खाद्य अनाज' होता है। अधिकांश कदन्नों का उत्पत्ति स्थल भारत है। यह फसलें कई प्रकार के आवश्यक उपयोगी पोषक तत्वों से भरपूर होती है जो कि मानव शरीर के लिए लाभदायी व गुणकारी होते हैं। इसलिए इन फसलों को पोषक तत्व अनाज भी कहा जाता हैं। यह फसलें कई प्रकार के जैविक व अजैविक कारकों के लिए प्रतिरोधी होती हैं अर्थात् उनका सामना करने में सक्षम होती हैं। इन फसलों की खेती कम गहरी लगभग 15 सेमी. से भी कम अर्थात् उथली जमीन पर भी सफलतापूर्वक की जा सकती है। इन फसलों की महत्वपूर्ण बात यह है कि यह फसलें बहुत शीघ्र 3–4 महीने में परिपक्व हो जाती है व अच्छी उपज प्रदान करती है। लघु कदन्न फसलों में रागी सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है। भारत में बड़े पैमाने पर अर्थात समुद्र स्तर से लेकर हिमालय की ऊँचाई तक इसकी खेती की जाती है इन फसलों को मुख्यतः असिंचित परिस्थितियों में बोया जाता है। निम्न उर्वरता वाली भूमि में भी इनकी उपज क्षमता बनी रहती है। खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से लघु अन्न फसलें एक महत्वपूर्ण फसल समूह हैं। ये फसलें मुख्य रूप से खरीफ ऋतु में उगायी जाती है।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र के लिए उपयोगी लघु कदन्न फसलें :

बुन्देलखण्ड क्षेत्र उत्तर प्रदेश के सात और मध्य प्रदेश के सात जिलों में लगभग सत्तर हजार वर्ग किलोमीटर में फैला हैं। यह क्षेत्र देश भर में अपनी अद्वितीय भौगोलिक संरचना और सांस्कृतिक विरासत के लिये जाना जाता हैं। दुर्भाग्यवश विगत एक दशक से भयंकर सूखे की मार झेल रहा यह क्षेत्र अपने कृषि संकट, भुखमरी, कुपोषण, पलयान और बढ़ते ऋण के कारण किसानों की आत्महत्या के लिये देश भर में चर्चा का विषय बना हुआ हैं। इस भयंकर सूखे की स्थिति में क्षेत्र की परंपरागत नकदी फसलों की खेती, जोकि अत्यधिक खाद और पानी पर निर्भर करती है दिन–प्रतिदिन मुश्किल होती जा रही हैं। इस संकट की परिस्थिति में इस क्षेत्र की अति प्राचीन फसलें जो की कम पानी और कम लागत यहाँ तक की सूखे की भंयकर स्थिति में भी दाना और चारा दोनों प्रदान करती हैं, एक विकल्प हो सकती हैं। सन् 1970 तक इस क्षेत्र में कई सूखारोधी और पोषण से भरपूर कदन्न फसलें जैसे की कोदो, कुटकी, सांवा और रागी उगायी जाती थी और लोगों के भोजन का एक मुख्य हिस्सा थी, परन्तु हरित क्रान्ति के आगमन के साथ इन फसलों का प्रचलन धीरे–धीरे कम होता चला गया और ये लगभग क्षेत्र से विलुप्त हो गयी। अब जबकि लगभग चार दशकों बाद पूरा क्षेत्र भयंकर सूखे की चपेट में हैं इस क्षेत्र में कृषि को लाभकारी व्यवसाय बनायें रखने के लिये इन परंपरागत कदन्न फसलों की ओर लौटना नितान्त आवश्यक हो गया हैं अपनी उत्कृष्ट प्रकाश संश्लेषण क्षमता और अभूतपूर्व पोषक गुणों के कारण कदन्न इस क्षेत्र में पोषण सुरक्षा के लिये एक महत्वपूर्ण विकल्प हो सकते हैं क्योंकि ये भयंकर सूखे की स्थिति अत्यधिक तापमान और कम उर्वराशक्ति वाली भूमी में भी आसानी से उगायी जा सकती हैं। इन छः कदन्न फसलों में एकसावा (ब्रानयार्ड मिलेट) है। सामान्यतः सावा की खेती हल्की तथा कम उपजाऊ भूमि में की जाती है जिसमें पानी कम ठहरता हो।

बुन्देलखण्ड में सावा खेती को पुनः प्रचलन में लाये जाने के कई कारण है जैसे सावा की फसल का सूखा सहन करने की क्षमता, फसल द्वारा उच्च तापमान के प्रति सहनशील होना, रोग तथा कीट व्याधि का कम प्रकोप होना, उच्च कोटि का चारा प्राप्त होना तथा दानों में अधिक मात्रा में खनिज पदार्थो का होना इत्यादि। वैज्ञानिकी विधि से इन फसल की उपज को 25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक आसानी से बढ़ाया जा सकता हैं। किसानों द्वारा सावा की उचित उपज क्षमता का दोहन न कर पाने का मुख्य कारण स्थानीय प्रजातियों का परम्परागत तौर तरीकों द्वारा उगाया जाना हैं। सावा की स्थानीय प्रजातियाँ न केवल कम उपज देती हैं, वरन् फसल सघनता को भी प्रभावित करती हैं। वर्षाश्रित क्षेत्रों के लिये इन फसलों का विशेष महत्व है क्योंकि

- हिमालयी क्षेत्र इनके उद्भव का एक मुख्य केन्द्र माना गया है तथा पर्यावरण एवं पोषण सुरक्षा की दृष्टि से भी यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है।
- ये फसलें वर्षाश्रित क्षेत्रों के कठिन वातावरण में उगायी जाती हैं तथा ये पोषक तत्वों के लिए सस्ता एवं सुलभ स्रोत हैं। खाद्य प्रौद्योगिक अनुसंधान संस्थान द्वारा किये गये विश्लेषणों से पता चलता है कि लघु अन्न फसलें विविध पोषक पदार्थों से भरपूर हैं।
- इन फसलों में अधिक रेशा होने के कारण, इनका सेवन मधुमेह तथा हृदय रोगों से पीड़ित व्यक्तियों के लिये लाभदायक है।
- लघु अन्न फसलों में सूखा सहन करने की क्षमता अधिक होती है तथा इन फसलों की खेती वर्षाश्रित दशा में कम उपजाऊ वाली भूमि पर की जाती है जहाँ पर भी ये भरपूर पैदावार देती है।
- वर्तमान परिवेश में जब मौसम काफी असामान्य हो गया है तब इन फसलों की उपयोगिता बढ़ जाती है। इन फसलों में बदलते पर्यावरणीय माहौल में अपने को ढालने की अपार क्षमता है।
- इनमें रोगों एवं कीटों की समस्या भी कम होती है, जिसके कारण विषम परिस्थितियों में भी यह फसलें कुछ न कुछ उपज देने में सक्षम होती हैं।
- इन फसलों से उच्च गुणवत्तायुक्त चारा मिलता है जिसकी प्रायः हमारे प्रदेश में कमी है। प्रकृति के साथ अनुकूलता एवं वर्तमान समय में इन फसलों की बढ़ती माँग वर्षाश्रित क्षेत्रों के किसानों के अर्थिक स्वावलम्बन की दिशा में एक मील का पत्थर साबित हो सकती है।

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में उगाई जाने वाली प्रमुख लघु कदन्न फसलें–

लघु कदन्न (माइनर मिलेट्स)	सामान्य नाम	वानस्पतिक नाम
फॉक्सटेल मिलेट	कंगनी	सीटेरिया इटेलिका
फिंगर मिलेट	रागी/मंडुआ	इलुसिन कोराकाना
कोदो मिलेट	वारागु	पास्पेलम स्क्रोबाइकुलेटम
लिटिल मिलेट	कुटकी	पेनिकम सुमात्रेन्स
बार्नयाड मिलेट	सांवा	इकाइनोक्लोआ एस्कुलेन्टा
प्रोसो मिलेट	चेना	पेनिकम मिलिएसियम

लघु अन्न फसलों का पोषण में महत्व :

वर्षाश्रित क्षेत्रों में उगायी जाने वाली परम्परागत फसलें पोषक तत्वों के लिहाज से अत्यन्त धनी व गुणकारी हैं। जैसा कि निम्न तालिका से विदित है कि चीना, कौणी, आदि में चावल एवं गेहू की तुलना में ज्यादा प्रोटीन एवं मंडुवा के दानों में कैल्शियम चावल की तुलना में कई गुना अधिक पाया जाता है। लघु कदन्नों के उत्पादन से कई प्रकार की स्वास्थ्य संबंधित समस्याओं (मधुमेह, हृदय विकारों) को दूर किया जा सकता है एवं पोषक तत्वों जैसे आयरन, जिंक, फोलिक अम्ल, कैल्शियम इत्यादि की पूर्ति की जा सकती है।अति महत्वपूर्ण बात यह है कि यह फसलें अत्यधिक गर्म व शुष्क क्षेत्रों में कम जल होने के पश्चात् भी अच्छी पैदावार प्रदान करती है। यदि इन फसलों में स्थानीय किस्मों के स्थान पर उन्नत किस्मों का उपयोग किया जाए तो इन फसलों की उपज को तीन गुना तक बढ़ाया जा सकता है।भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के द्वारा 1986 में ष्अखिल भारतीय समन्वित लघु कदन्न सुधार परियोजनाष् की शुरुआत के बाद इन फसलों पर जोर दिया गया। यह फसलें मोटे अनाज (गेहूं, चावल व मक्का) की तुलना में जल्दी पक जाती हैं। इन फसलों का कम मूल्य होने के कारण यह आमजन को आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं। यह फसलें सी.–4. पादपों की श्रेणी के अंतर्गत होने के कारण अत्यधिक मात्रा में जल उपयोग दक्षता (डब्ल्यू.यू.ई.) अर्थात् उपलब्ध जल का उपयोग करके अधिकाधिक उपज प्रदान करती है व अधिक मात्रा में कार्बन संचय करती है। लघु कदन्नों में मोटे अनाजों (गेहूं, चावल व मक्का) की तुलना में पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, कच्चे रेशे, सूक्ष्म तत्व (कैल्शियम, फास्फोरस, आयरन इत्यादि) प्रचुर मात्रा में पाए जाते है, इसलिए यह फसलें शिशुओं, दूध पिलाने वाली माताओं व वयस्कों के लिए लाभदायी व गुणकारी होती है। लघु कदन्नों में धीमी गति से स्त्रावित होने वाला ग्लूकोज पाया जाता है जिसका ग्लाइसिमिक सूचकांक बहुत कम होता है। यह फसलें वैश्विक स्तर की बीमारी जैसे मधुमेह की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है, इसमें उपस्थित रेशे की मात्रा कब्ज जैसी समस्याओं से भी राहत दिलाती है। यह फसलें उन लोगों के लिए भी अच्छी होती है जो ग्लूटेन के प्रति असहनशील होते हैं। इसमें पाया जाने वाला मैग्नीशियम सूक्ष्म तत्व हड्डियों के खनिजीकरण, दांतो के रख–रखाव व प्रोटीन को बनाने में सहायता करता है।लघु कदन्नों के संपूर्ण दानों व इनसे बने उत्पादों के नित्य सेवन करने से अनेक बीमारियों जैसे मधुमेह, पाचन तंत्र संबंधित व हृदय विकार जैसी गंभीर समस्याओं से बचा जा सकता है। कोदो कदन्न में विटामिन–बी खासतौर पर नियासिन, पायरिडोक्सिन, फोलिक अम्ल व पोषक तत्व जैसे (जिंक, मैग्नीशियम, पोटेशियम) प्रचुर मात्रा में पाए जाते है, इसमें रेशे की मात्रा अधिक व वसा की मात्रा कम पायी जाती है।इसमें अधिक मात्रा में लेसिथिन पाया जाता है जो कि मानव शरीर के तंत्रिका तंत्र को मजबूती प्रदान करता है।चेना कदन्न में उच्च मात्रा में प्रोटीन (12.5 प्रतिशत) पाया जाता है। सावा कदन्न में गामा–अमीनो–ब्यूटायरिक अम्ल (जी.ए.बी.ए.) व बीटा–ग्लूकेन पाया जाता है जो कि जारण विरोधक (एंटी ऑक्सीडेंट) व रक्त में पाए जाने वाले वसा (कोलेस्ट्रॉल) के स्तर को भी कम करने में सहायक होता है। अंकुरित कदन्न, शिशुओं के लिए उपयुक्त आहार है। वयस्कों एवं दुर्बल व्यक्तियों के द्वारा भी इसे आसानी से पचाया जा सकता है। कदन्नों के क्षारीय प्रवृत्ति होने के कारण यह पाचन तंत्र को स्वस्थ व तनाव को भी नियंत्रित करता है। मानव शरीर के प्रतिरक्षा तंत्र को मजबूत व स्वस्थ बनाए रखता है, इसके साथ ही यह मोटापे को भी कम करता है व जीवन शैली से संबंधित व्याधियों से दूर रखता है।

वर्षाश्रित क्षेत्रों के लिये लघु अन्न फसलों की उन्नतशील प्रजातियाँ :

विवेकानन्द वर्षाश्रित क्षेत्रों कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा तथा अन्य संस्थानों के द्वारा वर्षाश्रित क्षेत्रों में मंडुवा तथा मादिरा की कई उन्नतशील प्रजातियाँ विकसित की गयी हैं। इन प्रजातियों में स्थानीय किस्मों की तुलना में ज्यादा पैदावार प्राप्त की जा सकती है। साथ ही ये प्रजातियाँ सभी प्रमुख रोगों के लिये सहिष्णु या प्रतिरोधी है। इन प्रजातियों का विवरण एवं उनके विशिष्ट गुणों का उल्लेख नीचे किया गया है।

मडुआ की उन्नतशील प्रजातियाँ :

मडुआ की उन्नतशील प्रजातियों में जी.पी.यू. 45, शुद्रा (ओ.यू.ए.टी.–2), चिलिका (ओ. ई.बी.–10), भैरवी (बी.एम. 9–1), व्ही.एल.–149, इत्यादि प्रजातियाँ हैं यह 105–120 दिनों में तैयार होकर 22–37 कुंतल प्रति हेक्टेयर उपज देती है उपज क्षमता प्रजातीय तथा परिपक्वता अवधि पर निर्भर करती है।

वी.एल. मंडुवा 149: यह अधिक उपज देने वाली (25–35 कुन्तल प्रति हेक्टेयर) झौंका रोगरोधी किस्म है। वर्ष 1991 में इस किस्म को पूरे देश (तमिलनाडु व आन्ध्र प्रदेश को छोड़कर) के लिए अनुमोदित किया गया था। इस किस्म का विकास वी. एल. मंडुवा 204 एवं अफ्रीकी मूल की दाता किस्म (आइ ई–882) के संकरण से किया गया है। इस प्रजाति के तने की गाँठों पर हल्का बैंगनी रंग होता है तथा प्रत्येक बाली में 8–10 खुली हुई उंगलियाँ होती हैं।

वी.एल. मंडुवा 347: जल्दी पकने वाली मंडुवा की यह किस्म केन्द्रीय प्रजाति विमोचन समिति द्वारा उत्तराखण्ड, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, झारखण्ड, गुजरात एवं बिहार में वर्षाश्रित अवस्था के लिये वर्ष 2012 में विमोचित की गयी। इस प्रजाति ने उपरोक्त छः राज्यों में राष्ट्रीय मानक प्रजाति बी.आर. 708 से 11.4 प्रतिशत अधिक उपज दर्ज की। इस प्रजाति ने अखिल भारतीय समन्वित प्रयोग क्षेत्रों में 21.73 कु./हे. की औसत उपज दी। यह प्रजाति प्रध्वंष रोग के लिये सामान्य रुप से प्रतिरोधी है। इस प्रजाति में लौह तथा जिंक की मात्रा भी अधिक है। यह प्रजाति विलम्ब से मानसून आने की दशा में आपात योजना के लिये उपयुक्त है।

वी.एल. मंडुवा 352: यह अधिक उपज देने वाली (25–30 कुन्तल प्रति हेक्टेयर) मध्यम झौंका रोगरोधी किस्म है। वर्ष 2014 में इस किस्म को पूरे देश (तमिलनाडु व आन्ध्र प्रदेश को छोड़कर) के लिए अनुमोदित किया गया था। इस किस्म का विकास वी.एल. मंडुवा 204 एवं अफ्रीकी मूल की दाता किस्म (आइ ई–882) के संकरण से किया गया है। इस प्रजाति की प्रत्येक बाली में 8–10 खुली हुई उंगलियाँ होती हैं। जल्दी पकने वाली मंडुवा की यह किस्म विलम्ब से मानसून आने की दशा में आपात योजना के लिये उपयुक्त है।

वी.एल. मंडुवा 376: यह अधिक उपज देने वाली (28–35 कुन्तल प्रति हेक्टेयर) झौंका रोगरोधी किस्म है। वर्ष 2018 में इस किस्म को पूरे देश के लिए अनुमोदित किया गया था। यह प्रजाति 100 दिन में पकने वाली है।

वी.एल. मंडुवा 379: जल्दी पकने वाली व अधिक उपज देने वाली (26–35 कुन्तल प्रति हेक्टेयर) यह किस्म झौंका रोग के लिये भी प्रतिरोधी है। वर्ष 2018 में इस किस्म को उतर भारत के मंडुवा उगाने वाले राज्यों के लिए अनुमोदित किया गया है।

लघु अन्न फसलों में पोषक तत्व (ग्राम प्रति 100 ग्राम दाना)

फसल	नमी प्रतिशत	प्रोटीन	वसा	खनिज	रेशा	कार्बोहाइड्रेड	ऊर्जा कैलोरी प्रति 100 ग्रा.
मंडुवा	12.4	7.3	1.3	2.7	3.6	72.0	328
मदिरा	11.1	6.2	2.2	4.4	9.8	65.5	309
चीना	11.5	12.5	3.5	1.9	5.2	63.8	354
कौणी	11.9	11.2	4.0	3.3	6.7	63.2	351
चावल	12.5	6.8	0.5	0.7	0.2	78.2	345
गेहूँ	12.6	11.8	1.5	1.5	1.2	71.2	346

स्रोत– मलेशी 2001

मादिरा की प्रजातियाँ :

वी.एल. मादिरा 172: इस प्रजाति का विमोचन सन् 2000 में केन्द्रीय प्रजाति विमोचन समिति द्वारा किया गया। यह प्रजाति कंडुवा तथा चित्ती रोग सहिष्णु है। इसके पौधें की लम्बाई लगभग 95–100 सेमी. होती है। यह 85–90 दिनों में पक कर तैयार होने वाली किस्म है। इसके दाने स्लेटी रंग के होते हैं तथा औसत उपज 20–23 कु./हे. है।

वी.एल. मादिरा 207: इस प्रजाति का विमोचन सन् 2008 में केन्द्रीय प्रजाति विमोचन समिति द्वारा किया गया है। यह प्रजाति कंडुवा रोग सहिष्णु है। इसके पौधे की लम्बाई लगभग 115 से 125 सेमी. होती है। यह 90–95 दिनों में पक कर तैयार होने वाली किस्म है। इसके दाने स्लेटी रंग के होते हैं तथा औसत उपज 16–19 कु./हे. है।

सांवा की अन्य उन्नतशील प्रजातियाँ :

अनुराग, वी.एल. – 29, डी.एच.वी.एम. – 93 – 3, कंचन एवं सी.ओ. (के.वी.) – 2

बुन्देलखण्ड क्षेत्र में उगाई जाने वाली लघु कदन्न फसलों की उन्नत किस्में :

लघु कदन्न	किस्म
रागी	डी.एच.एफ.एम. 78–3, रागी, वी एल 379, जी एन एन –7,सी ओ– 15
कंगनी	डी एच एफ टी 109–3, राजेंद्र काउनी–1–2, सूर्या नंदी, एस आई ए 3088
वारागु	जवाहर कोदो, इंदिरा कोदो, टी एन ए यू 86,आर के 390–25, जे.के. 137
सांवा	सी ओ (के वी)– 2,डी एच बी एम 93–2, डी एच बी एम 93–3
कुटकी	डी एच एल एम–36–3,जी एन वी –3, टी एन पी–एम–230

लघु कदन्नों की शस्य क्रियाएँ :

खेत की तैयारी :

बलुई दोमट मिट्टी सावा की खेती के लिये उपयुक्त रहती है। एक दो जुताई करके खेत का समतलीकरण कर लेते हैं। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाना चाहिए।

जलवायु :

यह फसलें सीमांत भूमि वाली मृदा के वातावरण में अच्छे से उग सकती हैं, यह खाद्य फसलें विशेष तौर पर प्रवृत्ति से जलवायु के प्रति प्रत्यास्थ होती हैं। यह फसलें कम जल 300 मि.मी. वर्षा आधारित क्षेत्रों में भी अच्छे से उगती हैं व जल्दी परिपक्व होती हैं तथा कम मात्रा में निवेश (उर्वरक, जल) की आवश्यकता होती हैं। कदन्न फसलें कृषकों के लिए उपयुक्त व अनुकूल होती हैं इसलिए इन फसलों को सुस्त कृषक फसल भी कहा जाता है क्योंकि इन फसलों के लिए गहरी जुताई की आवश्यकता नहीं होती हैं, इसमें एक बार बीजों की बुवाई के बाद केवल 2 से 3 जीवन रक्षक वर्षा की जरूरत होती हैं, जो कि फसल को बचाए रखती हैं, जिससे कृषक को अच्छी पैदावार मिलती हैं।

बुवाई का समय :

लघु कदन्न फसलों की उन्नत प्रजातियों की बुवाई मई अंत से जून मध्य तक करने पर भी उतनी उपज प्राप्त होती है जितनी मार्च–अप्रैल में बुआई करने पर होती है। अतः बुवाई का उपयुक्त समय मई अंत से जून मध्य तक रहता हैं।

बीज दर :

सामान्यतः लघु कदन्नों की एक हैक्टयर क्षेत्र के लिए 8–10 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती हैं।

बीजोपचार :

लघु कदन्नों में सूखा प्रतिरोधी क्षमता को बीज कठोरण या दृढ़ीकरण द्वारा बढ़ाया जा सकता हैं, इस प्रक्रिया के लिए बीजों को जल में 2% पोटेशियम क्लोराइड के विलयन में 12 घंटे तक रखने के बाद, 12 घंटे तक सूर्य के प्रकाश में सुखाया जाता हैं, इसके पश्चात् बीज बुवाई के लिए तैयार हो जाता हैं। मडुआ को बोने से पहले उसका बीज उपचार कर ले ना जरूरी होता है इसके लिए प्रति किलो ग्राम बीज में 2–2.5 ग्राम कार्बेन्डाजिम – कार्बोक्सिन – क्लोरोथेलोनिल से उपचारित करने के उपरांत ही बुआई करना चाहिए बुआई के लिए दो विधियाँ प्रचलित हैं : सीधी बुवाई और पौधा उखाड़ कर पौधरोपण, धान की फसल की तरह लगाना आदि। यदि सीधी बुवाई की बात करें तो कतारों में 20 सेमी. की दूरी रखते हुए इसकी बुवाई की जा सकती है 10 किग्रा. प्रति हेक्टेयर तथा पौध प्रति रोपण से की जाने वाली बुआई के लिए 15 किग्रा. प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है अगर पौधशाला में पौध तैयार कर प्रतिरोपण किया जाए तो प्रति हेक्टेयर क्षेत्र के लिए सात से आठ किलोग्राम बीज ही पर्याप्त रहता है प्रतिरोपण के लिए कतार से कतार की दूरी 20 सेमी. तथा पौध से पौध की दूरी 10 सेमी. रखना अच्छा माना गया है खरीफ मौसम के लिए बुवाई का उचित समय जून में मानसून के प्रारंभ होने पर है प्रतिरोपण के लिए पौधे की आयु 25 से 28 दिन की होनी चाहिए।

बुवाई की विधि :

किसान भाई प्रायः इसकी बुवाई छिडकवाँ विधि से करते हैं। लेकिन छिडकवाँ विधि की अपेक्षा पंक्ति में बुवाई करने से उपज में बढ़ोत्तरी के साथ–साथ निराई–गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण में आसानी होती है। लघु कदन्नों के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22.5 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 7.5–10 सेमी. रखनी चाहिए। लघु कदन्नों में पंक्तियों में बुवाई की जाती हैं, इन फसलों को कई दाल वाली फसलों के साथ अंतर फसल के रूप में भी उगाया जा सकता हैं, ज्यादातर कदन्न कम अवधि वाली फसलें होती हैं व अधिक सूखा प्रतिरोधी भी होती हैं, इसलिए इन्हें आकस्मिक सूखा होने की स्थिति में भी आसानी से उगाया जा सकता हैं।

खाद एवं उर्वरक :

लघु कदन्न फसलों की खेती के लिए खाद एवं उर्वरक के सम्बंध में एक बात यह है कि मृदा की उर्वरा शक्ति की जाँचकर ने के बाद उनकी अनुशंसा की जाए तो बेहतर रहेगा। एक साधारण भूमि के लिए 2.5 टन गोबर की सड़ी खाद या कंपोस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की अंतिम जुताई के समय देना ठीक रहता है उर्वरकों में कम अवधि में तैयार होने वाली सीधी बुवाई करने की स्थिति में 20:30:20 किलोग्राम नाइट्रोजन फॉस्फोरस एवं पोटैशियम प्रति हेक्टेयर तथा प्रतिरोपण की स्थिति एवं लम्बी अवधि वाले प्रदेशों के लिए यह अनुशंसा 40:30:20 के अनुपात में की गई है नाइट्रोजन की 25% एवं फास्फोरस तथा पोटेशियम की पूरी मात्रा बुआई या रोपाई के समय तथा नाइट्रोजन की 50% मात्रा बुवाई या रोपाई के 25 दिन बाद तथा 25% मात्रा 35 से 40 दिनों बाद डालनी चाहिए मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग अच्छा रहता है। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 5–7 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद के साथ–साथ 40 किग्रा. नाइट्रोजन तथा 20 किग्रा. फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर (क्रमशः 800 ग्राम व 400 ग्राम प्रति नाली) प्रयोग करना चाहिए। फॉस्फोरस की संपूर्ण मात्रा तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा जुताई के समय पंक्ति में डाल देनी चाहिए। शेष नाइट्रोजन, फसल जमने के लगभग एक माह पश्चात निराई के शीघ्र बाद छिड़क देनी चाहिए। अगर इसकी खेती जैविक कृषि के अंतर्गत कि जाती हैं तो 10–15 टन प्रति हेक्टेयर सड़ी हुई गोबर का प्रयोग करने से भी उतनी उपज मिलती है, जितनी रसायनिक उर्वरक प्रयोग करने के मिलती है।

पोषक तत्व प्रबंधन :

पोषक तत्व प्रबंधन की बात की जाए तो इसमें लगभग 25:15:15 अनुपात में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटेशियम की आवश्यकता पड़ती हैं, जिसमें संपूर्ण फॉस्फोरस, पोटेशियम व आधी नाइट्रोजन की मात्रा बुवाई के समय व शेष आधी नाइट्रोजन की मात्रा बीज बुवाई के 30–35 दिन बाद खड़ी फसल में छिड़काव की जाती है।

खरपतवार नियंत्रण :

लघु कदन्न फसलों में खरपतवार की समस्या के नियंत्रण के लिए जरूरी है कि समय–समय पर उसकी निराई–गुडाई करते रहें पहली निराई 21 से 25 दिन बाद और दूसरी उसके 15 दिनों बाद करने की अनुशंसा की गई है ज्यादा पौध होने की स्थिति में छँटनी करके जरुरत से ज्यादा पौधों को निकालने की आवश्यकता होती है यह कार्रवाई 12 से 15 दिन के बाद कर लेना चाहिए। रोपने के 15 से 20 दिनों बाद पहली निराई गुड़ाई कतारों के बीच डच को चलाकर करें रसायनों के प्रयोग से खरपतवार का नियंत्रण किया जा सकता है इसके आइसो प्रोटोरॉन नामक दवा का 1 लीटर मात्रा 500 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के 48 घंटों के अंदर छिड़काव करनी चाहिए। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की अधिकता होने पर 2,4–डी नामक दवा का एक किलोग्राम मात्रा 600 लीटर पानी में घोलकर 20–25 दिनों बाद छिड़काव करना चाहिए। सवा के खेतों में खरपतवार का प्रकोप बहुत होता है। फसल जमाव के 45 दिनों तक खेत को खरपतवारों से मुक्त रखना अति आवश्यक होता है। बुवाई के 20–25 दिनों तथा 40–45 दिनों के पश्चात निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। खरपतवारनाशी रसायन आइसोप्रोट्रयूरोन खरपतवार नियंत्रण में अधिक लाभप्रद व कारगर साबित हुआ हैं। एक नाली के लिए 15 ग्राम आइसोप्रोट्रयूरोन पाऊडर 15 लीटर पानी में घोल कर बुआई के तुरन्त या 24 घंटे के भीतर समान रूप से खेत में छिड़काव करें। खरपतवारनाशी रसायन तभी प्रभावकारी होगा, जब खेत में पर्याप्त नमी हो। अतः बुवाई तभी करें जब खेत में नमी हो। अगर खेती जैविक मोड में करते हैं तो खरपतवार नियंत्रण रसायनों द्वारा नही किया जा सकता, ऐसी स्थिति में जैसे ही मई माह में वर्षा होती है तो खेत की जुताई कर एक माह तक खुला छोड़ दे। मानसून आने पर पुनः जुताई करके खरपतवारों को नष्ट करने से भी काफी हद तक खरपतवारों पर आसानी से नियंत्रण पाया जा सकता हैं। बुवाई के 25–30 दिनो के पश्चात प्रथम निराई–गुड़ाई अवश्य करें।

रोग नियंत्रण :

झुलसा रोग :

इसकी फसल में धान की तरह झुलसा रोग का प्रकोप पाया जाता है और कभी–कभी यह बहुत हानिकारक होता है पत्तियों पर गोल गोल या अंडाकार भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं बाद में यह धब्बे राख जैसे दिखने लगते हैं इसके लिए रोग रोधी किसमें जैसे ए 40 एवं जीपीयू 48 लगाना चाहिए साफ नामक दवा 2 ग्राम या करबंडाजिन 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। बीज उपचार करने से अनेक प्रकार के रोगों से भी बचा जा सकता है।

कण्ड (स्मट) :

यह सावा का प्रमुख रोग है तथा स्फेसिलाथीका अल्मोरी नामक कवक द्वारा होता है। इस रोग का प्रभाव मुख्यतः पौधे की बालियों पर दिखता हैं। इस रोग के कारण बालियों में कुछ अण्डाशय सवंमित हो जाते हैं परन्तु बाली के सभी दाने प्रभावित नहीं होते। सवंमित अण्डाशय गोल, रोएंदार हो जाते हैं और इनका आकार सामान्य दानों से दो या तीन गुना बढ़ जाता है। खेत में ऐसे अण्डाशयों को आसानी से पहाचाना जा सकता है। साथ ही अण्डाशयों में बीज की जगह रोगकारक कवक के काले/भूरे सोराई भर जाते हैं जो कि एक पतली परत से ढके होते हैं। फसल की कटाई के समय यह परत फट जाती है और अन्दर भरे कवक के सोराई हवा के साथ फैलकर स्वस्थ बीजों की सतह पर चिपक जाते हैं। यदि इस प्रकार के सवंमित बीजों की बुवाई अगले साल में की जाए तो बड़े होने पर उन पौधों के अण्डाशय भी सवंमित हो जाते हैं और पौधे की उपज पर प्रभाव पड़ता हैं। काले सोराई के चिपकने के कारण स्वथ्य बीज भी खाने लायक नही रहते। कण्ड के सोराई पौधे के तनों तथा गांठों पर भी पाये जाते हैं जो अनियमित आकार के होते हैं।

रोकथाम :

कण्ड रोग के नियत्रंण हेतु सबसे उत्तम तरीका है रोग अवरोधी किस्मों का प्रयोग। सावा की किस्म "पी.आर.जे. 1" इस रोग के प्रति पूर्णतयाः अवरोधी है एवं अन्य उन्नतशील किस्में वी.एल.–29 तथा वी.एल.–172, वी.एल.–207 आदि में यह रोग कम लगता है, अतः इन प्रजातियों की बुवाई की जानी चाहिए। इसके अलावा बीज को बुवाई से पूर्व कार्बेन्डाजिम (2 ग्राम/किग्रा. बीज) की दर से उपचारित करें। साथ ही पुष्पन के समय 0.1 प्रतिशत की दर से कार्बेन्डाजिम का छिड़काव करने से भी इस रोग की रोकथाम कर सकते हैं।

पत्तियों का झुलसा :

इस रोग में पौधें की पत्तियों पर हल्के भूरे छोटे–छोटे धब्बे बन जाते हैं जोकि हैल्मिन्थोस्पोरियम नामक कवक के प्रकोप से होते है। उचित तापमान एवं नमी वाले वातावरण में यह धब्बे बड़े हो जाते हैं और आपस में मिलकर पत्तियों के बड़े भाग पर फैल जाते हैं। ताजे धब्बे बीच में भूरे तथा किनारों पर पीले होते हैं जो परिपक्व होने पर बीच में तेज भूरे व चैकलेटी रंग के हो जाते हैं। यदि रोग से पत्तियों का ज्यादा भाग प्रभावित हो जाए तो इसका असर पौधे की उपज पर भी पड़ता हैं। इस रोग के लक्षण दिखाई देने पर मैन्कोजेब कवकनाशी के 0.25 प्रतिशत घोल का 12–15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिए।

कीट नियंत्रण :

मडुआ की फसल में कीट कभी–कभी समस्या पैदा कर देते हैं जिसके कारण उत्पादन में कमी आती है मडुआ में निम्नलिखित कीट प्रमुख रूप से हानि पहुंचाते हैं।

गुलाबी तना छेदक :

इसका लारवा मडुआ के तने में छेदकर अंदर खोखला कर देता है और मध्य वाला तना भूरा हो जाता है कल्लों के निकलने की अवस्था में डेड हर्टकेल क्षण प्रदर्शित होते हैं। इसके नियंत्रण के लिए प्रकाश प्रपंच का व्यवहार प्रति हेक्टेयर में तीन से चार किया जा सकता है ट्राइकोडरमा पैरासाइट के अंडों से सेबनी ट्राईकोकार्ड को पत्तों में स्टेपल्स की मदद से भी स्टैपल किया जा सकता है इनसे निकलने वाले पैरासाइट्स कीट के लारवा को नष्ट करते हैं फॉस्फोमिडोंन दवा की 500 मिली लीटर मात्रा 500 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव किया जा सकता है यह कीट नियंत्रण करने में सक्षम पाई गई है।

कटवा किट :

यह कीट जड़ों तना और पत्तों को भी काटकर नुकसान पहुंचाते हैं इसके नियंत्रण के लिए साफ सफाई का ध्यान रखना अति आवश्यक है फसल अवशेष एवं खरपतवार को नष्ट करते रहें। लाभकारी फफूंद बवेरिया बेसियाना का छिड़काव 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से करने से नियंत्रण पाया जा सकता है रसायनों में क्लोर पायरी फॉस 1 लीटर दवा 500 से 600 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करने से भी अच्छे परिणाम मिलते हैं।

लाही कीट :

यह समूह में रहने वाले कीट हैं यह मडुआ की फसल की पत्तियों कोमल डंठलों तथा तने का रस चूसकर फसल को कमजोर बना देते हैं पौधों पर चीटियों की उपस्थिति लाही के आक्रमण को इंगित करती है लाही के नियंत्रण के लिए डायमेथोएट दवा का 1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में मिलाने के बाद छिड़काव कर देना चाहिए।

सांवा के प्रमुख कीट एवं उनका नियंत्रण :

सावा का प्रमुख कीट प्ररोह मक्खी है। यह कीट फसल को काफी नुकसान पहुंचाती हैं। अतः इसका नियंत्रण अति आवश्यक है।

प्ररोह मक्खी :

सावा की पौध अवस्था का यह मुख्य कीट है। वयस्क कीट एक छोटे आकार की मक्खी होती है जिसके शिशु फसल को हानि पहुँचाते हैं इसका प्रकोप पौधे की प्रारम्भिक अवस्था में बहुत बधिक पाया जाता हैं। यह शिशु पौधे की प्रारम्भिक अवस्था में मध्य प्ररोह में घुसकर क्षति पहुँचाते हैं फलस्वरूप उसके ऊपरी भाग सूख जाते हैं जिससे पौधे की बढ़वार रूक जाती है और पौधा मर जाता है। इसके नियंत्रण के लिए बुआई के समय इमिडाक्लोप्रिड 5 ग्राम प्रति किग्रा की दर से बीजोपचार करें अथवा फोरेट 10 प्रतिशत दानेदार दवा का 500 ग्राम प्रति नाली की दर से बुरकाव करना चाहिए। ज्यादा प्रकोप होने पर इमिडाक्लोप्रिड की 0.3 मिली. प्रति लीटर अथवा मोनोक्रोटाफास का 1 मिली0 प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिये। जैविक खेती वाले खेतों में प्ररोह के नियंत्रण के लिए नीम तेल 2 से 2.5 मिली. दवा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़के। इस कीट का नियंत्रण स्थानीय पेड़ बतैन के बीजों द्वारा भी किया जा सकता है। इसके लिए बतैन गिरी 100 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से शाम को भिगोकर रख दें। अगले दिन दोपहर के बाद इन बीजों को मसलकर घोल को छान लेते है तथा इस घोल के छिड़काव करने से काफी हद तक प्ररोह मक्खी पर नियंत्रण पाया जा सकता है। एक नाली के लिए 15 लीटर घोल की आवश्यकता होती है।

कब करें कटाई?

प्रजातियों की परिपक्वता अवधि के अनुसार कटाई की जाती है बालियों के पकने पर कटाई कर तीन से चार दिनों तक खलिहान में धूप में सुखाकर दौनी करनी चाहिए फिर साफ सफाई कर इसे भंडारित करें मडुआ की फसल कम दिनों में तैयार होकर अच्छी उपज देती है इसमें सेहत के भी अनेक राज छुपे हैं यह एक विशिष्ट गुणों वाली फसल है जिसको अपनाने की आवश्यकता है। फसल की कटाई उचित समय पर कर लेनी चाहिए अन्यथा चिड़ियों के द्वारा नुकसान तथा सड़ने से अनाज उत्पादन कम हो जाता हैं। सावा की मड़ाई तथा गहाई अत्यन्त कष्टदायक है प्रायः इसकी मड़ाई डंडे से तथा कुटाई चावल की ओखली में कूट कर की जाती हैं। इस परेशानी को देखते हुए विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने विवेक थ्रेसर 1 का विकास किया है जिसके प्रयोग से एक घंटे में 30–35 किग्रा. दानों की मड़ाई या 7–8 किग्रा. मादिरा की कुटाई की जा सकती है। मादिरा के चावल की बाजार में काफी माँग है तथा अच्छे दाम (70–80 प्रति किग्रा.) भी मिलते हैं। अतः इस थ्रेसर से मादिरा से चावल निकाल कर बाजार में बेचकर उचित लाभ कमा सकतें हैं। इस थ्रेसर के बारे में अधिक जानकारी विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान अल्मोड़ा से प्राप्त की जा सकती हैं।